ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292RNI
REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 153-155**

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-18, No.-IV, Issues-34, YEAR-Oct-Dec. 2024

भारत की सामाजिक संरचना और स्त्री

डॉ0 चारुशीला सिंह
हिन्दी, गोरखपुर (उ०प्र०) भारत

Received-03.10.2024, Revised-10.11.2024, Accepted-16.11.2024 **E-mail : charushahi111@gmail.com**

सारांशः ***सृष्टि की गति बनी रहे इसलिए स्रष्टा ने स्त्री और पुरुष दोनों बनाया। महत्व में कोई किसी से कम–ज्यादा नहीं, दोनों के सहयोग से ही जीवन रूपी गाड़ी को गति व दिशा मिलती है और जहाँ तक बात भारतीय महिलाओं की है तो सदैव से यह उर्जा से भरी,जीवन्त, उत्साही एवं प्रतिबद्धता के साथ जीवन पथ की चुनौतियों का सामना करती रही हैं। झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई और शिक्षा की अलख जगाने वाली प्रथम महिला शिक्षक सावित्रीबाई फुले को ही लें तमाम बाधाओं के बावजूद ये पथ पर डटी रहीं। फिर भी प्राचीन समाज से लेकर आधुनिक समाज तक किसी न किसी रूप में स्त्रियाँ उपेक्षित ही रहीं। यद्यपि सरकारी और गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा महिला उत्थान के तमाम प्रयास हो रहे हैं तथापि वह स्थिति दृष्टिगत नहीं हो रही जो होनी चाहिए। यह तभी संभव होगा जब पूरा समाज जागरूक होगा ।***

कुंजीभूत शब्द– सामाजिक संरचना, जीवन रूपी गाड़ी, उर्जा से भरी, जीवन्त, उत्साही, प्रतिबद्धता, जीवन पथ, शिक्षा की अलख

सामाजिक संरचना का अर्थ है, एक ऐसी व्यवस्था जिसमें उस व्यवस्था व संरचना से जुड़े अनेकानेक तत्व एक दूसरे से जुड़े होते हैं। यही व्यवस्थित पद्धति सामाजिक संरचना कहलाती है। सामाजिक संरचना में व्यक्ति को उस संरचना की इकाई मानते हैं। अपनी– अपनी भूमिका अदा करने के लिए संगठन में सभी व्यक्तियों का एक दूसरे से जुड़ा होना आवश्यक है।

इस पृथ्वी का सबसे बौद्धिक प्राणी मनुष्य है। स्त्री पुरुष का भेद प्रकृति की संरचना में नहीं है। बल्कि दोनों स्वतंत्र होते हुए भी एक दूसरे के सहयोगी व पूरक ही हैं। लेकिन जैसे–जैसे मानव प्रगति करता गया एक शक्ति को बढ़ावा देता गया और इस प्रकार उदय हुआ पुरुषवादी शक्ति का, सत्ता का, स्त्री को हर क्षेत्र में विभेदित कर दिया गया, वह सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक और राजनीतिक स्तर पर काफी पीछे छूट गई। यहीं से पुरुष के हस्तक्षेप का अर्थात मानव निर्मित समाज व्यवस्था का प्रभाव दिखने लगता है। स्त्री के सम्मान, सामानत, स्वतंत्रता व प्राकृतिक अधिकारों तक पर पाबंदी लगा दी जाती है और यहीं से स्त्री का संघर्ष शुरू होता है, पुरुषवादी समाज की बधाओं से।

नारी अस्य समाजस्य कुशलवास्तुकारा अस्ति –दुनिया के कुछ भागों में यह विश्वास प्रचलित है कि जब परमात्मा ने मानव को उत्पन्न किया तो मानव ने स्वयं को एकाकी पाकर परमात्मा से साथी मांगा, परमात्मा ने वायु से शक्ति, सूर्य से गर्मी, हिम से शीत, पारे से चंचलता, तितलियों से सौंदर्य और मेघ गर्जन से शोर लेकर स्त्री की रचना की। स्त्री पुरुष की शरीरार्ध और अर्धांगिनी मानी गई। श्री और लक्ष्मी के रूप में वह मनुष्य के जीवन को सुख और समृद्धि से दीप्त और पुंजित करने वाली कही गई। उसका आगमन पुरुष के लिए शुभ, सौरभमय और सम्मानजनक था। वैदिक और उत्तर वैदिक काल से ही ऐसे प्रमाण मिलते हैं जिसमें नारी की अभ्यर्चना की गई है, प्रकृति स्वरूपा नारी को परमेश्वर की शक्तियों के रूप में स्थान मिला है, विद्या, विभूति और शक्ति की क्रमशः सरस्वती, लक्ष्मी एवं पार्वती या दुर्गा के रूप में सर्वत्र पूजा होती है।

महान आचारशास्त्री एवं धर्म वेत्ता मनु ने लिखा है:

'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।
एत्र एतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्र अफला क्रिया।।

उपर्युक्त तथ्यों के आलोक में मैं यह कहना चाहती हूं कि भले ही स्त्रियों को देवी जैसे पूजित न किया जाय लेकिन उन्हें शिक्षा का अधिकार, समानता का अधिकार प्रदान किया जाय। हर युग की अपनी परिस्थितियाँ थीं क्या देवियों का जीवन संघर्षपूर्ण नहीं था ? क्या उनके और हमारे अधिकार एक से हैं ? आज स्त्रियों को सावित्री जैसा देखना चाहते हैं लोग, तमाम उदाहरण दिए जाते हैं पर क्या सावित्री की तरह आज की स्त्रियों को भी अपने पिता द्वारा कुछ अधिकार प्राप्त है ? मैं चाहती हूं की उपर्युक्त पर विचार किया जाय और स्त्रियों को मानव मानते हुए समानता का अधिकार दिया जाय, शिक्षा व सुरक्षा दी जाय।

हिंदू समाज में नारी का महत्त्व बहुत अधिक है, पत्नी के बिना कोई धार्मिक कार्य संपन्न नहीं होता, पुरुष अकेले अपूर्ण है, गृह की शोभा व संपन्नता स्त्री से ही मानी जाती है, पुरुष और स्त्री के व्यक्तित्व का विकास एक दूसरे से ही संभव है, नारी स्नेह व सौजन्य की प्रतिमा है, त्याग व समर्पण की मूर्ति है, नारी का अपमान मानवता का सबसे बड़ा अपराध है। नारी दुष्ट मर्दन में चण्डी, संग्राम में कैकेयी, श्रद्धा में शबरी, सौंदर्य में दमयन्ती, सुगृहिणी में सीता, अनुराग में राधा, विद्वता में गार्गी और राजनीति में लक्ष्मीबाई तुल्य है।

प्राचीन भारत में स्त्रियों की दशा एवं स्थिति– प्राचीन भारत में स्त्रियों की दशा एक रूप नहीं थी, उन्हें आदर्शात्मक तथा मर्यादायुक्त सम्मान प्राप्त था। किंतु वैदिक काल उनके लिए पूर्णतरू स्वर्णिम काल नहीं था। उन्हें संपत्ति में कोई भाग प्राप्त नहीं था वे आश्रित थीं। धर्म शास्त्राकारों ने व्यवस्था की कि स्त्रियां स्वतंत्र नहीं,सभी मामलों में परतंत्र एवं आश्रित हैं। बचपन में, विवाहोपरांत एवं बुढ़ापे में वे क्रम से पिता, पति एवं पुत्र द्वारा रक्षित होती हैं। किंतु 'सतपथब्राह्मण' के अनुसार उनको इतना मान व गौरव प्राप्त था कि उनके बिना पुरुष अधूरा माना जाता था, वैदिक युग में नारी प्रत्येक क्षेत्र में समान रूप से समादृत थी, यज्ञ में उसकी अनिवार्यता पत्नी संज्ञा चरितार्थ करती है।

अनुरूपी लेखक/ संयुक्त लेखक

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-18, No.-IV, Issues-34, YEAR-Oct-Dec. 2024

प्राचीन काल में पति की मृत्यु के बाद पत्नी सती हो जाती थी, विधवाओं का जीवन नारकीय था। मनु के अनुसार –'पति के मर जाने पर स्त्री, यदि वह चाहे तो केवल फलों, पुष्पों व मूलों को ही खाकर शरीर को गला दे, किन्तु उसे किसी अन्य व्यक्ति का नाम भी नहीं लेना चाहिए।' किसी ने कहा रंगीन वस्त्र पहनना छोड़ देना चाहिए, बाल संवारना बंद कर देना चाहिए, पान खाना, पुष्प आभूषण, गंध सभी से विरत हो जाना चाहिए और कुश की चटाई पर सोना चाहिए। पति की सम्पत्ति पर उसका कोई अधिकार नहीं, उत्तराधिकारी के अभाव में वह राज्य का हो जाता है तथा भरण – पोषण हेतु थोड़ी ही राशि प्रदान की जाती है। प्राचीन काल में सहशिक्षा की व्यवस्था थी और परदा प्रथा नहीं था।

सूत्रों व स्मृतियों का काल– इस काल में नारी की स्थिति अत्यंत दयनीय हो गई, उन्हें हेय दृष्टि से देखा जाता था, कन्या का जन्म अशुभ माना जाता था। महाभारत, मनुस्मृति एवं पुराणों में स्त्रियों पर घोर नैतिक लांछन लगाए गए हैं। अनुशासन पर्व के अनुसार सूत्रकार का निष्कर्ष है कि स्त्रियां अनृत हैं, स्त्रियों से बढ़कर कोई दूसरा दुष्ट नहीं ये एक साथ ही उस्तुरा की धार हैं, विष हैं, सर्प हैं और अग्नि हैं। बृहत्पराशर के अनुसार स्त्रियों की काम शक्ति पुरुषों की तुलना में आठ गुनी होती है।

पूर्व मध्यकाल में स्त्रियों की स्थिति– इस काल में धर्म व समाज की रक्षा के नाम पर अनेक ऐसी व्यवस्थाओं का नियमन हुआ जिससे स्त्रियों की दशा निरंतर दयनीय होती गयी। भेंट, दान, भूमि, घर की बिक्री एवं बंधक में स्त्रियों द्वारा लिखे गए पत्र साधारणतः अस्वीकृत माने जाते थे। प्राचीन की अपेक्षा पूर्व मध्ययुगीन भाष्यकर और शास्त्रकार संपत्ति संबंधी अधिकारों के संबंध में तर्कशील व उदार थे जिन्होंने नारी के अन्यान्य अधिकारों को अत्यंत विनम्र एवं सहज भाव से स्वीकार किया।

बौद्ध एवं जैन धर्मयुगीन स्त्रियों की स्थिति– इस युग में स्त्रियों की दशा काफी अच्छी थी, परदा प्रथा का प्रचलन नहीं था। स्त्री की रुचि, विद्या, धर्म और दर्शन में खूब रमी है।

मध्यकाल में नारियों की स्थिति– मध्यकाल आते–आते नारी की स्थिति अत्यंत दयनीय हो गयी। मुसलमान आक्रमणकारियों ने हिंदुस्तान की परंपराओं, मान्यताओं एवं समाज को कुचल दिया, विदेशी आक्रमणकारियों की वासनात्मक दृष्टि से बचने के लिए परदा प्रथा का चलन शुरू हुआ। मध्यकालीन कुरीतियों में सती प्रथा, बाल विवाह, परदा प्रथा तथा विधवाओं को हेय दृष्टि से देखना आदि प्रमुख कहा जा सकता है। संतों एवं सिद्ध कवियों ने नारी के प्रति अत्यंत कटु दृष्टिकोण अपनाया, मध्यकाल के साहित्यकारों ने नारियों की खूब खिल्ली उड़ाई।

उत्तर मध्यकाल में स्त्रियों की स्थिति– इस काल में कवियों ने जो दुर्गति की वह कहने की आवश्यकता नहीं, स्त्री मात्र भोग–विलास की वस्तु बन कर रह गयी। श्रृंगार वर्णन में आकंठ डूबे बिहारी जैसे कवि घर– बाहर ,कूप– बावली, वन –बाजार सर्वत्र स्त्री की छवि ही निहारते हैं और उसे ही छाया ग्राहिनी राक्षसी के रूप में बताते हैं तब संत कवियों की बात ही क्या।

आधुनिक काल में स्त्रियों की स्थिति– समय परिवर्तनशील होता है हमेशा एक जैसा नहीं रहता, आधुनिकता के आते ही स्त्री खड़ी हो गई है अपने अधिकार व व्यक्तित्व के लिए। सती प्रथा, बाल–विवाह विधवाओं के प्रति हेय दृष्टि जैसी कुरीतियाँ लगभग समाप्त हो चुकी हैं। फिर भी दहेज प्रथा, अपहरण व बलात्कार आदि चरम उत्कर्ष पर पहुंच गए हैं। पुरुषों से दबकर रहना अब स्त्रियों को पसंद नहीं लेकिन ऐसा नहीं है कि स्त्रियों ने लड़ाई जीत लिया हो वह अभी प्रयासरत हैं स्वयं को पुरुष की अधीनता से मुक्त करने के लिए। लोकतांत्रिक समाज में सभी की निजता का ख्याल होना चाहिए। आज के समय में अगर स्त्रियों को आजादी दी भी गई है तो पुरुष सेंध लगाने से चूकते नहीं। पैरों में बेड़ी डालकर घूमने की आजादी मिलती है, तो पंख काट कर उड़ने की।

नारी सशक्तिकरण से ही मानवता का विकास संभव– अगर समाज को विकास करना है तो महिलाओं का उत्थान करना ही होगा। भूमंडलीय संसार में भारत की स्त्रियों ने राजनीति, खेल, पायलट तथा सभी व्यवसायों में जहां कल्पना भी नहीं की जा सकती अपनी सम्मानजनक जगह बना ली है। हर क्षेत्र में सफलता पर सफलता हासिल कर रही हैं। फिर भी स्त्री और आजादी नदी के दो किनारों की तरह है। अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए संघर्ष करने वाली नारियों ने लंबा सफर तय कर लिया है फिर भी एक बड़ा हिस्सा वर्षों से हो रहे सामाजिक भेदभाव का शिकार है।

हमारी सामाजिक व्यवस्था में नारियों को उनकी सामाजिक संरचना व शारीरिक बनावट के आधार पर देखा जाता है न कि व्यक्ति के तौर पर, इसके पीछे कई कारण हैं, लेकिन अशिक्षा व धन की कमी मूल कारण है। जैसे ही स्त्री सजग हुई, शिक्षित हुई अपने अधिकारों के लिए लड़ी, स्वयं को आर्थिक रूप से सुदृढ़ किया पुरुष ने फिर उसे छला अर्थ छीनकर, सक्षम होकर भी अक्षम बन जाती है, आत्मनिर्भर होकर भी अधीन हो जाती है स्त्री।

तमाम आंदोलनों व संघर्षों के फलस्वरूप स्त्री ने स्वतंत्रता व समानता का संवैधानिक अधिकार कुछ हद तक पाया है लेकिन कागजी अधिकारों को पुरुष समाज पूरी तरह से व्यवहार में लाने में बाधक है। निर्भया कांड के वकील ए.पी. सिंह को ही लीजिए उच्चतर शिक्षा पाने के बाद भी लड़कियों को सूरज ढलते ही घर की चहारदीवारी में कैद होने की सलाह देते हैं।

आधुनिक युग में स्त्री हर दिन किन– किन समस्याओं से गुजर रही है कोई इससे अन्जान नहीं है, बलात्कारी दानव आज हर मोड़,चौराहे व गली में छिपे बैठे हैं। शिक्षित होकर भी सुरक्षित नहीं है नारी।

भारतीय नारी आज पाश्चात्य देशों की पछुवाँ बयान से प्रभावित– जहां एक तरफ नारी प्रगतिपथ पर अग्रसर है वहीं दूसरी ओर अपने मूलभूत कार्यों व गुणों को विस्मृत भी करती जा रही है। पाश्चात्य सभ्यता का अंधानुकरण कर रही है। कॉफी हाउस, होटल, दफ्तर ज्यादा पसंद आते हैं कलात्मक सौंदर्य का स्थान उत्तेजनात्मक सौंदर्य ने ले लिया है। अंग प्रदर्शन, मादक द्रव्यों का सेवन, यौन स्वतंत्रता, मैत्रीकरण आदि में महिलाएं पुरुषों से आगे निकल गई हैं। एक वर्ग आज विकृति के दौर से गुजर रहा है।

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-18, No.-IV, Issues-34, YEAR-Oct-Dec. 2024

पुरुष स्त्री का एक वर्ग यह समझता है कि नारी अगर कामकाजी है, तो उसकी सारी समस्याएं समाप्त हो जाती हैं। नारी नारीत्व के अभिशापों से मुक्त हो जाती है, पर ऐसा नहीं है, उसे दोहरी जिम्मेदारी निभानी होती है। वह आज भी निर्णय लेने को स्वतंत्र नहीं, आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र नहीं, पुरुषों की अपेक्षा औरतों से सौतेला व्यवहार होता है, उनका यौन शोषण होता है, ऊंचे पद पर होने से पति की हीन भावना का शिकार होना पड़ता है, दांपत्य में दरार, बाहरी दौरे, रात्रि ड्यूटी, परिजनों का शक, बच्चों की परवरिश, यौन शुचिता, समाज में बदनामी का डर तमाम तरह की चुनौतियों से एक औरत को गुजरना पड़ता है।

उपर्युक्त तथ्यों के आलोक में जब हम प्रेमचंद साहित्य की तरफ आते हैं, तो देखते हैं की प्रेमचंद की नारी भावना ने समाज में एक युगांतर प्रस्तुत किया है। उन्होंने अनुभव किया की नारी धन की नहीं प्रेम की भूखी होती है।

प्रेमचंद अतीत की ओर दृष्टिपात करते हुए सोचते हैं –'जब तक साहित्य का काम केवल मन बहलाव का सामान जुटाना, लोरियां गा–गाकर सुनाना, आंसू बहाकर जी हल्का करना था, तब तक उसके लिए कर्म की आवश्यकता न थी। हमारी कसौटी पर वही साहित्य खरा है, जिसमें उच्च चिंतन हो जो हममें गति व बेचैनी पैदा कर सके, सुलाए नहीं क्योंकि सोना मृत्यु का लक्षण है।'[1]

अधिकांशतः जिन समस्याओं को लेकर प्रेमचंद जी ने अपने उपन्यासों और कहानियों में बल दिया है वह अधिकतर मध्यम वर्गीय परिवार के नारियों की है। प्रेमचंद के आविर्भाव के समय नारी चेतना व स्वतंत्रता की बातें हो रही थीं उनकी स्थिति अच्छी नहीं थी, उन्हें अधिकारों से वंचित रखा जाता था ऐसे समय में स्त्री ही प्रेमचंद का मुख्य विषय बन गई। उसकी समस्याएं प्रेमचंद साहित्य में झलकने लगीं, आवाज उठाने लगीं। सेवासदन के माध्यम से प्रेमचंद ने मध्यम वर्गीय स्त्री की दुविधा भरी परिस्थिति का बड़ा ही सजीव व मार्मिक चित्रण किया है। उसके घुटन व संतोष का चित्रण किया है। एक तरफ आकांक्षाएं तथा दूसरी तरफ मर्यादा पालन व धन की कमी से जूझते नर– नारियों को अनेक कुरीतियों ने संतप्त किया है। वस्तुतरू प्रेमचंद जी का उपन्यास साहित्य अपने युग की परिस्थितियों एवं उसकी समस्याओं का सच्चा दर्पण है जो आज भी प्रासंगिक है। सेवा सदन में अपना सब कुछ गँवा देने की बाद भी कृष्णचंद्र अपनी बेटी शांता को समझाते हुए कहते हैं –'संतोष को कभी मत छोड़ना। इस मंत्र से कठिन से कठिन समय में भी तुम्हारा मन विचलित न होगा।'[2]

कितने ही वर्ष आए गए लेकिन ये कथन, ये पिता के वचन आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं। आज समाज में फैली अनेकों बुराइयों की तह में जाकर देखें तो पायेंगे की कहीं न कहीं असंतोष ही इनका कारण है। आज की भागती जिंदगी में संतोष तो जैसे खो ही गया है, हम जितना ही पाते हैं उतना ही असंतोष बढ़ता जा रहा है, आज ऐसे ही प्रेरक साहित्य समाज को सुधारने में मदद कर सकते हैं, मरती मानवता को जिंदा कर सकते हैं। भारतीयता का जैसा व्यापक रूप, अपने राष्ट्र की समस्याओं का जैसा गंभीर चित्र व अपने युग का जैसा इतिहास प्रेमचंद में मिलता है वैसा कहीं पर नहीं।

आचार्य द्विवेदी जी के शब्दों में– 'अगर आप उत्तर भारत की समस्त जनता के आचार– विचार, भाषा–भाव, रहन–सहन, आशा– आकांक्षा, दुरूख– सुख और सूझ–बूझ जानना चाहते हैं, तो प्रेमचंद जी से उत्तम परिचायक आपको नहीं मिल सकता। झोपड़ियों से लेकर महलों तक, खोमचे वालों से लेकर बैंकों तक, गांव से धारा– सभाओं तक आपको इतने कौशलपूर्वक और प्रामाणिक भाव से कोई नहीं ले जा सकता। आप बेखटके प्रेमचंद का हाथ पकड़ कर मेड़ों पर गाते हुए किसान को, अन्तपुर में मान किए बैठी प्रियतमा को, कोठे पर बैठी वार वनिता को, ईर्ष्या परायण प्रोफेसरों को, दुर्बल बैंकरों को, साहस परायण चमारिन को, ढोंगी पंडित, नीचाशय अमीर देख सकते हैं और निश्चिंत होकर विश्वास कर सकते हैं कि जो कुछ आपने देखा है वह गलत नहीं है।'[3]

प्रेमचंद जी का उपन्यास सेवासदन आज भी समकालीन व प्रसांगिक बना हुआ है क्योंकि इसमें नारी समस्या के साथ ही धर्माचार्यों, धनपतियों, मठाधीशों, समाज सुधारकों के पाखंड, चरित्रहीनता, दहेज–प्रथा, घूसखोरी, वेश्यागमन, ढोंग, मनुष्य के दोहरे चरित्र, सांप्रदायिक द्वेष आदि का यथार्थ चित्रण है, साथ ही यह दानवता के बीच मानवता का अनुसंधान है।

और अंत में इतना ही कहना चाहती हूँ कि अब हमें अतीत की नई व्याख्या और परंपराओं को नए सिरे से परिभाषित करने की आवश्यकता है। क्योंकि महाभारत से लेकर रामायण तक सभी नारी के संघर्षों व शोषण को ही बयां करते हैं। प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप से निरंतर समाज निर्माण में अग्रणी भूमिका निभाने वाली नारी स्वयं के निर्माण हेतु कब स्वतंत्र होगी। उसे पुरुषों का एक अलंकार न मानकर पुरुषों के बराबर का दर्जा दिया जाय, शिक्षा व सुरक्षा दी जाय।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1– साहित्य का उद्देश्य – प्रेमचंद 57.
2– सेवा सदन पृ.187.
3– हिन्दी साहित्य पृ. 435.

*****